JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

महाकवि रेवाप्रसाद द्विवेदी
(व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

प्रणव पाण्डेय
(एम.ए.संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)
नेट (यू.जी.सी. नई दिल्ली)
मो. 7017458783

अप्रतिम प्रतिभा के धनी **डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी** का जन्म **22 अगस्त सन् 1935 ई.** में **'सिहोर'** जनपद (मध्यप्रदेश) के नन्दनगर (नांदनेर) नामक ग्राम में रेवा (नर्मदा) नदी तट पर हुआ। मात्र आठ वर्ष की अवस्था में पिता पं. नर्मदाप्रसाद द्विवेदी एवं माता श्रीमती लक्ष्मी देवी के आकस्मिक निधन से रेवाप्रसाद जी को अत्यल्प अवस्था में ही माता–पिता से प्राप्त होने वाले अनिर्वचनीय सुख से वंचित होना पड़ा। स्थानीय प्राथमिक विद्यालय में पढ़ते हुए, प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने के बाद पं. रेवाप्रसाद जी उच्चाध्ययन की अभिलाषा से वाराणसी आ गये। सन् 1953 ई. में रेवाप्रसाद जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से शास्त्री परीक्षा एवं सन् 1956 ई. में पारम्परिक पद्धति से आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद, आधुनिक पद्धति का आश्रय लेते हुए सन् 1959 ई. में एम.ए. (संस्कृत) की परीक्षा उत्तीर्ण की। 'हेमाद्रेः रघुवंशदर्पणः' इस विषय पर शोधकार्य करते हुए पं. रेवाप्रसाद द्विवेदी जी ने सन् 1964 ई. में अपना शोधप्रबन्ध पूर्ण करके पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त करने के बाद सर्वोच्च शैक्षणिक उपाधि के रूप में जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर से डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की।

आजीविका के रूप में अध्यापनवृत्ति का चयन करते हुए डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी ने मध्यप्रदेश में राजकीय महाविद्यालय में सहायक प्रोफेसर (प्रवक्ता) के पद पर कार्यभार ग्रहण किया। लगभग 11 वर्षों की सेवा के बाद सन् 1970 ई. में आपकी नियुक्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राच्यविद्या धर्मविज्ञान संकाय में साहित्यविभाग में 'रीडर' के पद पर हो गयी और आप वाराणसी आ गये। सन् 1977 ई. से 1990 ई. तक आपने साहित्य– विभागाध्यक्ष एवं संकायप्रमुख के रूप में प्रोफेसर के पद को अलंकृत किया। सन् 1990 से 1992 ई. तक आप विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सम्मानित सदस्य भी रहे। सन् 1993 ई. से 1995 ई. तक सम्मानित रिटायर्ड प्रोफेसर के रूप में आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पुनः प्रोफेसर के रूप में कार्य करते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को अपनी सेवाओं से लाभान्वित किया।

संस्कृतभाषा एवं साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान्, बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी जी लब्धप्रतिष्ठ प्राध्यापक होने के साथ–साथ नैसर्गिक कवित्वशक्ति–सम्पन्न असाधारण महाकवि के रूप में भी जाने जाते हैं। आपने महाकाव्य, गीतिकाव्य, नाटक, नाटिका, कथासाहित्य, काव्यशास्त्र इत्यादि अपनी विविध रचनाओं से आधुनिक संस्कृतसाहित्य की समृद्धि में जो योगदान दिया है, वह सर्वथा अप्रतिम एवम् अभिनन्दनीय है। आप की प्रमुख काव्यकृतियाँ निम्नलिखित हैं–µ

1. हरिहरावदानकाव्यम्
2. रत्नस्वरूपावदानकाव्यम्
3. शतपत्रम्
4. प्रमथः
5. श्रीरेवाभद्रपीठम्
6. संस्कृतहीरकम्
7. शकटारम्
8. अयि नीलनदि
9. अमेरिका
10. रामपरिसंख्या
11. शरभंगम्
12. मतान्तरम्
13. शरशय्या
14. कुमारविजयम्
15. उत्तरसीताचरितम्
16. स्वातन्त्र्यसम्भवम्।

1. हरिहरावदानकाव्यम्– स्वामी करपात्री जी महाराज के जीवनचरित्र पर आधारित इस खण्डकाव्य में कुल **261 पद्य** हैं। ये पद्य छन्दशास्त्रीय दृष्टि से मन्दाक्रान्ता, मालिनी, वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी, स्रग्धरा, इन्द्रवज्रा, उपजाति, द्रुतविलम्बित, पुष्पिताग्रा, पृथिवी, एवं हरिणी वृत्त का इस काव्य में अत्यन्त सुन्दर प्रयोग मिलता है। इसकी सरसता, सरलता एवं माधुर्य आदि के अवलोकनार्थ कुछ पद्य यहाँ प्रस्तुत हैं। ज्ञातव्य है कि यह काव्य सन् 2009 ई. में कालिदास–संस्थान, वाराणसी से प्रकाशित है। इस खण्डकाव्य के ललित पद्य निश्चित की द्रष्टव्य हैं।[1]

2. रत्नवस्वरूपावदानकाव्यम्–स्वामी श्री स्वरूपानन्द जी महाराज को आधार बनाकर लिखे गये इस काव्य में कुल 307 पद्य हैं, जो मन्दाक्रान्ता, मालिनी, वसन्ततिलका, वियोगिनी, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी, अनुष्टुप्, उपजाति, पृथ्वी एवं स्रग्धरा वृत्त में निबद्ध हैं। सन् 2010 ई. में कालिदास संस्थान, वाराणसी से प्रकाशित यह काव्यग्रन्थ, भावपक्ष एवं कालपक्ष दोनों ही दृष्टि से सर्वथा अभिनन्दनीय है। इस काव्य के कुछ पद्य अविकलरूप में यहाँ उद्धृत हैं–[2]

प्रह्लादे कृतवान् दयां शिशुवरे भूत्वा नृसिंहः प्रभुः,
यः सोऽस्मिन् वसति स्म सीम्नि सुतरामेको हि देवेश्वरः।
श्रीधाम्नि स्वयमेव कापि दयिता तस्यैव लब्धोदया,
भूत्वा श्रीललिताम्बिका परतरा श्रीराजराजेश्वरी।। 5।।

प्रदीप्ते भाले यस्त्रिपुर–हर–पुण्ड्रेण सहितो,
निधत्ते यत् किंचित् सुरभितृणभा न शबलम्।
तदीयं हेमाभं मसृणमसृणं वर्णमलिके,
प्रभाते स्वर्णाद्राविव रविरुचिं यो विकिरति।। 8।।

राधात्वं वृणुते जिघृक्षतितरां कृष्णो यदा स्त्रीतनुम्,
कृष्णत्वं वृणुते नियच्छतितरां राधा यदा पौरुषम्।
एतद् द्वन्द्वति केवलेऽक्षरविधौ ग्रीवाविलादुद्गते,
चित्ते किन्तु सदैकतां हि भजते पश्यन्ति का साक्षिणीम्।। 13।।

3. शतपत्रम्– 'शतपत्रम्' महाकवि रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत एक मुक्तककाव्य है, जो सन् 1987 ई. में कालिदास संस्थान वाराणसी से प्रकाशित हुआ है। इस काव्य में कुल **115 मुक्तक** पद्य हैं। इस काव्य की विशेषता यह है कि इसके प्रत्येक पद्य का प्रारम्भ **'कविता'** शब्द से किया गया है। इस प्रकार यह काव्य 'कविता' के विविध रूपों, प्रयोगों, विम्बों तथा परिभाषाओं को प्रस्तुत करने वाला सर्वथा नवीन एवं हृदयाह्लादक काव्य है। उदाहरणार्थ इस काव्य के कुछ पद्य यहाँ प्रस्तुत हैं–[3]

कविता चितिसीमनि स्वताया अमृतस्रोत उदस्तमृत्युतन्त्रम्।
उपदीकृत –विश्वभूति – योगो ममकारः कविता पराम्बिकायाः।। 4।।

कविता हृदयस्य कापि भाषा, मुखरा मौनमयी वधूर्नवेव।
नहि शक्तिरथो न तत्र भक्तिः, प्रतिपत्तिस्तु समर्पणाय मार्गः।। 7।।

कविता नहि हंसमात्रचंचूः, पयसोर्या खलु भेदने नदीष्णा।
कविता ननु सा मयूरचंचूरपि काकोदरचूर्णने पटुर्या।। 72।।

4. प्रमथः– 'प्रमथः' नामक काव्यसंग्रह डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत नौ रचनाओं का संग्रह है। यह काव्य सन् 1988 ई. में आनन्दकानन प्रेस, वाराणसी से प्रकाशित हुआ। भाषा एवं भाव दोनों ही दृष्टि से यह काव्य अत्यन्त प्रशंसनीय है। उदाहरणार्थ 'प्रमथः' काव्य के **'प्रलापाः'** शीर्षक से प्रथम पद्य,[4] **'किं नु करोमि'** से पन्द्रहवाँ पद्य[5] तथा **'निसर्गः'**[6] शीर्षक से इकतीसवाँ पद्य द्रष्टव्य है।

5. श्रीरेवाभद्रपीठम्– 'श्रीरेवाभद्रपीठम्' डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत एक **'गीतिकाव्य'** है। यह काव्य सन् 1988 ई. में प्रकाशित हुआ। कुल **150 गीतिपद्यों** से युक्त इस काव्य में नर्मदा नदी की स्तुति वर्णित है। इन पद्यों के माध्यम से कवि ने सांस्कृतिक बोध के साथ–साथ रेवा (नर्मदा) के तटवर्ती ग्राम्यजीवन का अत्यन्त हृदयहारी चित्रण प्रस्तुत किया है। किसी क्षेत्र विशेष की संस्कृति, रहन–सहन अथवा रीति–रिवाजों से परिपूर्ण जन–जीवन को स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत करने वाला यह एक अतुलनीय काव्य है। उदाहरणार्थ इस काव्य के पद्य क्रमांक 9 और 10 को देखा जा सकता है।[7]µ

6. संस्कृतहीरकम्– 'संस्कृतहीरकम्' काव्यग्रन्थ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हीरकजयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में सन् 1989 ई. में बी.एच.यू. वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। इस काव्य में विविध विषयों एवं महापुरुषों को आधार बनाकर स्तुति इत्यादि के रूप में अत्यन्त लावण्यमयी काव्यात्मक प्रस्तुति की गयी है, जो महाकवि प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी जी की विलक्षण प्रतिभा की परिचायक है। उदाहणार्थ इस काव्यग्रन्थ के कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं।[8]

7. शकटारम्– 'शकटारम्' खण्डकाव्य में महाकवि रेवाप्रसाद द्विवेदी ने **116 पद्यों** में इस जगत् की वर्तमान उथल–पुथल के प्रति अपनी जागरूक प्रवृत्ति को प्रतिविम्बित करने का सफल प्रयास किया है। 'शकटार' के रूप में डॉ. नेल्सन मण्डेला को चित्रित किया गया है। यह खण्डकाव्य सन् 2000 ई. में कालिदास संस्थान वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। प्रो. द्विवेदी की काव्यप्रतिभा के अवलोकनार्थ इस खण्डकाव्य के कुछ पद्य यहाँ उद्घृत हैं–[9]µ

अयि मातरियं महावराहं, परिणीयाऽपि भवस्यतीव दीना।
यदि वा रदनद्वयेऽदसीये, हहा मूर्च्छति कुण्ठितत्वमेकम्।। 17।।

प्रथमं परिमज्जिता तनुस्ते, प्रलयाब्धावुदधारि केशवेन।
अधुना स हि केशवोऽप्यकारि, न भवत्या न विहायसोऽरविन्दम्।। 19।।

8. अयि नीलनदि– नील नदी को आधार बनाकर प्रस्तुत खण्डकाव्य में महाकवि प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी ने जो ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सामग्री प्रस्तुत की है, वह सर्वथा अनुपम एवं सहृदयहृदयहारी है। कुल **242 पद्यों** में निबद्ध यह काव्यकृति सन् 2009 ई. में कालिदास संस्थान, वाराणसी से प्रकाशित है। इस काव्य के पद्यों की कमनीयता अत्यन्त हृदयहारी है।[10]

9. अमेरिका– वर्णनात्मक शैली में **246 पद्यों** में निबद्ध यह काव्य सन् 2008 ई. में कालिदास संस्थान, वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। इस काव्य में कवि ने संयुक्तराज्य अमेरिका का अत्यन्त तथ्यात्मक मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया है। अमेरिका–वर्णन की समाप्ति पर इस काव्य में **'एतत्तु याचामहे'** तथा **'विधेर्होमो निषेधानले'** इन दो शीर्षकों के अन्तर्गत दो छन्दोमुक्त काव्यों को अत्यन्त कमनीय शब्दों में प्रस्तुत किया गया है। इस काव्य को प्रारम्भ करने से पूर्व महाकवि प्रो. द्विवेदी जी ने 'सनातनकविता' शीर्षक के अन्तर्गत दस पद्यों को प्रस्तुत किया है। इस शीर्षक से प्राथमिक दो पद्य यहाँ उद्घृत हैं–

कविता न सनातनस्य काचिन्मधुवल्ली मदनाय मद्यसूतिः।
ननु साऽस्ति शिवप्रियाÂ यष्टिस्त्रिदला काऽप्यमृताÂ बिल्वपत्री।। 1।।

कविता मम पायसाभिषेक–परितृप्ते शिवयोर्युगे प्रक्लृप्ता।
हरिचन्दनकल्पिता सपर्या त्रिदलैर्बिल्वदलैः कृताऽऽतपत्रा।। 2।।

महाकवि रेवाप्रसाद जी के उदात्तभावों एवं लावण्यमयी भाषा के अवलोकनार्थ 'अमेरीका' शीर्षक से एक पद्य यहाँ उद्धृत हैं–

माता हृष्यति नूतनयौवनरसे मग्नां निरीक्ष्यात्मजां,
पुंसा केनचनापि सार्धमिह वा तत्रापि वा भ्राम्यतीम्।
सापत्न्यं प्रतिपद्यते च सुतया सार्धं सुतावल्लभं,
भुंजाना यदि तालमुज्झति रतिः पंचेषुणा प्रीणिता।। 236।।

10. रामपरिसंख्या–महाकवि प्रोफेसर रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत प्रस्तुत 'रामपरिसंख्या' काव्य में **18 खण्डों** के अन्तर्गत कुल **221 पद्य** हैं। 'रामपरिसंख्या' की समाप्ति पर **'अहमस्म्यहमेव कालदासः'** तथा **'अयि शकुन्तिके! अयि शकुन्तले!'** शीर्षकों के अन्तर्गत दो अन्य काव्यरत्नों को भी प्रस्तुत किया गया है। 'अहमस्म्यहमेव कालदासः' में **202 पद्य** तथा 'अयि शकुन्तिके! अयि शकुन्तले!' में कुल **124 पद्य** हैं। ज्ञातव्य है कि यह काव्य सन् 2008 ई. में कालिदास संस्थान, वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। महाकवि प्रोफेसर रेवाप्रसाद द्विवेदी की काव्यकला के अवलोकनार्थ 'रामपरिसंख्या'[11] एवं 'अहमस्म्यहमेव कालदासः'[12] से एक–एक पद्य उद्धृत हैं।µ

11. शरभंगम्– महर्षि शरभंग मुनि को आधार बनाकर लिखे गये इस खण्डकाव्य में कुल **108 पद्य** हैं। प्रस्तुत खण्डकाव्य सन् 2001 ई. में कालिदास संस्थान, महामनापुरी, वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। इस काव्य की कमनीयता एवं भावप्रवणता की जितनी भी प्रशंसा की जाय वह कम ही है। महाकवि प्रो. द्विवेदी जी की विलक्षण कवित्वशक्ति के समाकलन हेतु इस खण्डकाव्य से कुछ पद्य यहाँ उद्धृत हैं–[13]

शरभं खलु कंचिदष्टपादं, निखिलस्याऽस्य चराचरस्य विम्बम्।
गमयत्यखिलं विभूतियोगं, जगदम्बा शरभंग एष भावः।। 78।।

शरभ! महर्षितावधूटी, त्वयि धत्ते चरितार्थतां वरिष्ठाम्।
श्रयसे दृशि भौतिकं सजानिं, परमात्मानमसौ स एष रामम्।। 107।।

12. मतान्तरम्– 'मतान्तरम्' प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत व्यंग्यप्रधान एक मुक्तककाव्य है। सन् 2001 ई. में कालिदास संस्थान, महामनापुरी, वाराणसी से प्रकाशित इस मुक्तककाव्य में विविध विषयों एवं भावों से सम्बद्ध कुल **111 मुक्तक पद्य** हैं। किसी भी सहृदय–हृदय को झंकृत करने में ये 'मुक्तक' सर्वथा समर्थ हैं। अतः इस काव्य के कुछ मुक्तक द्रष्टव्य हैं।[14]

13. शरशय्या–महाकवि महामहोपध्याय प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत 'शरशय्या' वस्तुतः तीन खण्डकाव्यों का संग्रह है, जिन्हें 1. सुगतो व्रवीति, 2. वृद्धकुमारी तथा 3. शरशय्या, इन तीन शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ सन् 2002 ई. में कालिदास संस्थान, महामनापुरी, वाराणसी से प्रकाशित हो चुका है। **'सुगतो व्रवीति'** से दो पद्य यहाँ पर प्रस्तुत हैं–[15]

प्रथमं सुगतस्य मूर्त्तिभंगः, सुरभीणां च ततो वधातिरेकः।
यवन! त्वयाद्य काऽकारि, तदिमं स्वं प्रतिपद्यसे विनाशम्।।
जलमन्नमिवास्ति चेन्न भूमौ, भवतां मूर्त्तिगवीविनाशतः किम्।
भविता भवतां सुखं किमेतत्, परमात्मा नहि वीक्षते कुकृत्यम्।।

अर्थात्, अरे! इस्लाम के ठीकेदार! तूने जो बुद्ध की मूर्त्तियाँ तोड़ीं, फिर बेशुमार गाएँ काटीं, क्या तूँ जानता है कि तूने क्या किया? तूँ खुद के खात्मे की कगार पर पहुँच गया है। (अमरीकी बमबारी से यह खात्मा हो भी गया) यदि तुम्हारी भूमि में अन्न के समान जल भी नहीं है, तो क्या बुद्धमूर्त्तियों और गायों के विनाश से तुम्हें सुख मिल जाएगा? तुम्हारे ये कारनामें क्या तुम्हारे खुदा को दिखाई नहीं दे रहे हैं ?

'वृद्धकुमारी' शीर्षक से दो पद्य यहाँ द्रष्टव्य हैं–[16]

अयि वार्धकिनि! त्वदीयमेतद्, युगलं किं स्तनयोस्तदा चकार।
पुरतोऽप्यथ पृष्ठतो यदा धिङ्., न ददर्शान्धतमोवृते स्वभिन्नम्।।
तव वाससि सूक्ष्मतातिशीतेः, नितरां या खलु पारदर्शिताऽऽसीत्।
ननु कं विधिसृष्टिरत्नरत्नं, युवकं साऽभिमतं जुहूषति स्म।।

अर्थात्, अरे! बुढ़िया! तेरे इन दोनों स्तनों ने उस समय क्या किया होगा? जब आगे और पीछे घनघोर अँधियारी के बीच तुझे अपने अलावाँ कोई और नहीं दिखाई दिया होगा। अरे! कुवारी बुढ़िया! तेरे कपड़े इतने झीने थे कि उनमें पारदर्शिता थी। क्या वह विधाता की इस सृष्टि में रत्नों के रत्न किसी चहेते युवक को नहीं बुला रहे थे ?

'शरशय्या' नामक तृतीय एवम् मुख्य शीर्षक के अन्तर्गत शरशय्या पर विराजमान कुरुश्रेष्ठ गंगापुत्र भीष्म पितामह अपनी मनोव्यथा को व्यक्त करते हुये कहते कहते हैं कि 'शरों' की अपूर्व शय्या तो मुझ अकिंचन के मन में मेरे पिता आदि ने पहले से ही बना रखा था। अभी तक यह 'शरशय्या' छिपी हुई थी। आज विधाता ने उसे सामने लाना चाहा।[17]

14. कुमारविजयम्– 'कुमारविजयम्' महाकवि रेवाप्रसाद प्रणीत एकादश सर्गात्मक 'महाकाव्य' के रूप में प्रसिद्ध है। इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में तारकासुर की शक्ति का प्रभाव, द्वितीय सर्ग में कर्तिकेय के अग्निस्वरूप का वर्णन, तृतीय सर्ग में अग्निमूर्तिस्तुति, चतुर्थ सर्ग में पवमानमूर्ति–समुद्रेक, पंचम सर्ग में व्योममूर्ति–स्तुति, षष्ठ सर्ग में चिदीश्वरस्तुति, सप्तम सर्ग में तारकविलय, अष्टम सर्ग में कुमार का अभिनन्दन, नवम सर्ग में शिवोपस्थापन, दशम सर्ग में ब्रह्मदेवस्मिति तथा एकादश सर्ग में शान्तिलाभ वर्णित है। ग्रन्थ के अन्त में महाकवि प्रो. द्विवेदी ने अपना छन्दोबद्ध परिचय प्रस्तुत किया है।

वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण के रूप में ग्रन्थारम्भ में महाकवि प्रो. रेवाप्रसाद जी लिखते हैं कि भगवान शिव एवं भगवती शिवा का रमणोत्सव केवल 'रमण' के लिये नहीं था। इसका मुख्य प्रयोजन तो तारकासुर का मरण था, जो नित्य एवं सनातन मार्ग के रूप में विधाता के द्वारा निर्धारित था।[18]

प्रस्तुत महाकाव्य के ग्यारहवें एवम् अन्तिम सर्ग में पतिगृह से लौटकर पार्वती जी जब अपने मायके (पितृगृह) में आती हैं, तो इस आगमनोत्सव को वर्णन करते हुये, महाकवि द्विवेदी जी लिखते हैं– पति के घर से पुत्री पहली बार लौटी

है, यह सोचकर मेना एवं हिमालय ने उसके सम्मान में क्या क्या नहीं किया। विविध रंगों वाली बहुमूल्य मणियों को अपने हिमाच्छादित महल के ऑगन में बिखेर दिया।[19]

महाकवि प्रो. रेवाप्रसाद जी ने छन्दशास्त्र की दृष्टि से हरिणी, वियोगिनी, स्वागता, स्रग्धरा, शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका, रथोद्धता, पृथिवी, पुष्पिताग्रा, द्रुतविलम्बित, औपछन्दसिक, उपजाति, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा तथा अनुष्टुप् नामक छन्दों बहुत सुन्दर प्रयोग किया है। भावपक्ष एवं कलापक्ष दोनों ही दृष्टि से 'कुमारविजयम्' एक आदर्श महाकाव्य की कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है।

15. उत्तरसीताचरितम्– प्रस्तुत महाकाव्य **10 सर्गों एवं 694 श्लोकों** में विभक्त है। इतिवृत्त के रूप में प्रथम सर्ग में श्रीराम का अपनी पत्नी सीता एवं अनुजों के साथ अयोध्या में प्रवेश तथा श्रीराम–राज्याभिषेक वर्णित है। द्वितीय सर्ग में सीतापवाद विषयक वार्ता तथा सीतापरित्याग विषयक राम की दृढ़ता का वर्णन किया गया है। तृतीय सर्ग में भगवती सीता स्वयमेव सहर्ष वनगमन के लिये तैयार हो जाती हैं। चतुर्थ सर्ग में भगवती सीता लक्ष्मण के साथ वन की ओर प्रस्थान करती हैं। पंचम सर्ग में लक्ष्मण, भगवती सीता को वाल्मीकि आश्रम के पास छोड़ देते हैं, जहाँ भगवती सीता जी दो पुत्रों को जन्म देती हैं। षष्ठ सर्ग में अपने दोनों नवजात पुत्रों के साथ भगवती सीता महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में प्रवेश करती हैं। सप्तम सर्ग में लव और कुश के मानसिक तथा शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। अष्टम सर्ग में लव और कुश दोनों भाई श्रीराम के द्वारा छोड़े गये अश्वमेध विषयक घोड़े को पकड़ लेते हैं, जहाँ अन्ततः श्रीराम भी लव और कुश के समक्ष उपस्थित होते हैं। नवम सर्ग में माताओं, भाइयों एवं गुरुजनों के साथ श्रीराम का वाल्मीकि आश्रम में प्रवेश वर्णित है। ग्रन्थ के अन्त में दशम सर्ग में महर्षि वाल्मीकि, वशिष्ठ, श्रीराम तथा लव–कुशादि के समक्ष भगवती सीता गुरुजनों को प्रणाम करती हुई, पद्मासन लगाकर बैठ जाती हैं और स्थूलशरीर का मोह छोड़कर परमसमाधि में निमग्न हो जाती हैं। प्रो. द्विवेदी जी का यह महाकाव्य भी सभी काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोणों से एक उत्तम महाकाव्य है।

16. स्वातन्त्र्यसम्भवम्– महाकवि डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत 'स्वातन्त्र्यसम्भवम्' 72 सर्गों से युक्त एक उच्चकोटि का महाकाव्य है। इसमें सन् 1857 से सन् 1984 तक के भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का इतिवृत्त वर्णित है। इस महाकाव्य के 26 वें सर्ग का एक पद्य यहाँ द्रष्टव्य है–[20]

राजीव–संजययुता विगताधिकारा, रारज्यते स्म ननु सा तरसा ज्वलन्ती।
वाल्मीकिधामनि विवासघटीं नयन्ती, वैखानसी कुशलवानुगतेव सीता।।

सन् 1990 ई. में 'स्वतन्त्र्यसम्भवम्' के 28 सर्ग प्रकाशित हो चुके थे, जिसे सन् 1991 ई. में साहित्य अकादमी नई दिल्ली से पुरस्कृत भी किया गया। महाकवि डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी की काव्यसम्पत्ति अत्यन्त विशाल एवं काव्यशास्त्रीय गुणों से ओत–प्रोत है। सन् 1978 ई. में महामहिम राष्ट्रपति द्वारा प्रोफेसर द्विवेदी जी को **'राष्ट्रपति पुरस्कार'** से, 1985 ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा **'मालवीय स्मृति पुरस्कार'** से, 1993 ई. में बी.बी.पी. कलकत्ता द्वारा **'कल्पवल्ली पुरस्कार'** से तथा 1997 ई. में बिड़ला फाउण्डेशन द्वारा **'वाचस्पति पुरस्कार'** से महाकवि प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी जी को पुरस्कृत एवं सम्मानित किया जा चुका है।

सन्दर्भ (REFERENCE)

1. **रात्रिन्दिवं निखिलमेव विहाय सौख्यं,**
योगीश्वरस्तपति योऽध्ययने निलीनः।
वर्णाश्रम–द्रुमवनीं सुधया निषिंचन्,
द्रष्टैव तिष्ठति निरस्तजगत्प्रपंचः।। हरिहरावदानकाव्यम्।। 4।।

प्रातः कालमुपास्य चंक्रमणकं यः प्राप्य धाम स्वकं,
सूर्यस्योदयतः पुरैव विहितस्नानादिकृत्यो यती।
कुर्वाणस्तु बभूव योग–विहितानत्युत्कटान्यासनानि,
अक्लेशेन सुकोमलास्थिनिचयो विस्मापयन् भक्तकान्।। हरिहरावदानकाव्यम्।। 12।।
2. **रत्नस्वरूपावदानकाव्यम्।। 5, 8, 13।।**
3. **शतपत्रम् ।। 4, 7, 12।।**
4. **अयि लक्ष्मि! कथं विमन्यसे मां, ननु जानासि क एष को भवामि ।**
अहमस्मि सुदर्शनं त्वदीशे, पविरेषोऽस्मि तदग्रजे च भीष्मः।। प्रलापाः।। 1।।

5. कुशलः खलु यस्तु चौरकर्मण्यपि यज्ञे घृतपात्रकं निगीर्य।
स हि मह्यमहो पुरोहितत्वे, सुलभः संप्रति हन्त किं करोमि।। किं नु करोमि।। 15।।

6. मम धेनुरतीव पुष्टगात्रीत्यलमेतन् मम नास्ति तोषणाय।
प्रतिवेशि–बिडालक–प्रपोष–परिदग्धाम्बक–शूल–पीडितस्य।। निसर्गः।। 31।।

7. नारीणां वसनानि यत्र लहँगा चोली सशाटी, शिरो–
भूषायै ननु रेखडी, गुणशतैः केशेषु सन्नद्धता।
यासां वै कटिदोरकेण विपुलाभोगेन संशोभितं,
मध्यं तन्त्रति सार्थकीकृतविधौ मध्यप्रदेशश्रुतौ।। श्रीरेवाभद्रपीठम्।। 9।।
ताटंकं श्रवसोः सुवर्णरचितं ग्रीवासु कण्ठावृता,
स्वर्णालंकृतिरंगनासु भजते बाजट्टिका च श्रियम्।
बाजूबन्दयुगान्विते भुजयुगे चूडाऽवता नान्विता,
पादे वृश्चिक–पायजेब–कटिका गर्वाय संजाग्रति।। श्रीरेवाभद्रपीठम्।। 10।।

8. जयति शिवकपर्दो मत्स्यजायेव यस्मिन्,
प्रतिफलति कलेन्दोः षोडशी विष्णुपद्याम्।
हरिपदमिति संज्ञा व्योममूर्त्तिं यमुच्चैः,
श्रयति च घटकोषाद् भिद्यते नो घटो यत् ।। संस्कृतहीरकम्।। श्रीगंगास्तुतिः।। 1।।

जयन्ति सलिलोच्चयाः कुमुदकान्ति–राका–
निशापतिद्युतिमदोदयेऽनुदयमासृजन्तो बलात्।
भगीरथतपो यतो व्रजति चारितार्थ्यं यतः,
स चापि सगरान्वयस्तरति कापिलं कश्मलम्।। संस्कृतहीरकम्।। श्रीगंगास्तुतिः।। 3।।

9. शकटारम् ।। 17, 19 ।।

10. जड–चेतनयोः समन्वयो यः, तमिमं हन्त विवेचयन्ति धीराः।
किमु नील! तटे स्थितास्त्वदीये, विपरीतं परिणामतः श्रयन्ते।। अयि नीलनदि।। 10।।

अयि नीलनदि! त्वदीयमेतज्जडमेवास्ति जलं जडत्वसूतिः।
किमु वर्त्तत एष वै प्रवाहः, त्वयि जाड्यं च गतिश्च विप्रषिद्धे।। अयि नीलनदि।। 131।।

11. सुशीला दुश्शीलैः पृषतपृथुका फेरुतनयैः,
यथा व्यापाद्यन्ते ननु दिशि दिशि क्वाऽत्र न भुवि।
कथं राम! व्यर्थस्तव दशमुखोच्छेद–निपुणः,
शराणां संघातः क्षण इह चलत्स्वर्णशिखरः।। रामपरिसंख्या।। 28।।

12. मम सन्ति सुताः सहस्रजायाजनिताः कोटिमिताः सशस्त्रहस्ताः।
कवलानि तु कानिचिद्धि विश्वजनता तेष्वपि केवलस्य भोक्तुः।। अहमस्यम्यहमेव कालदासः।।18।।

13. शरभंगम् ।। 78, 107 ।।

14. असि रामजनिस्थलि! त्वमेका, हतभाग्या भरतावनौ न यस्याम्।
स्वयमस्त्यधिकारवान् स रामो, न च रामस्य जनोऽपि वीतसंख्यः।।
प्रवदन्त्यपि रामशब्दघोषे, प्रमुखाः केचन सांप्रदायिकत्वम्।
किमिमे जयघोषणासु गान्धेः निजनेतुश्च भवन्त्यसंप्रदायाः।। मतान्तरम् ।। 4, 7।।

15. सुगतो ब्रवीति ।। 31, 34।।

16. वृद्धकुमारी ।। 4, 6।।

17. शय्या शरैर्विरचितैव मनस्यपूर्वा, पित्रादिभिर्मम कृते कृपणस्य काचित्।
तामेव संप्रति तिरोहितविग्रहां वः, प्रत्यक्षतां ननु निनीषति कोऽपि वेधाः।। शरशैय्या।। 8।।

18. शिवयो रमणोत्सवो याऽसीद्, रमणार्थं न स केवलं बभूव।
मरणार्थमिदं तु तारकस्य, विधिमार्गेण सनातनात्मना।। कुमारविजयम्।। 1/1 ।।

19. पितृगृहमुपागता पतिगृहात् सुतेत्यादरा–
तिशीतिपरिपूरितौ किमु न चक्रतुस्तौ तदा।
महार्हमणिपुंजकं चक्रतुर्हिमाच्छादिते,
निकेतनगतेंऽगणे विगुणवर्णबोध्यं स्फुटम्।। कुमारविजयम्।। 11/6 ।।

20. स्वातन्त्र्यसम्भवम्।। 26/6 ।।

प्रणव पाण्डेय
(एम.ए.संस्कृतविभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)
नेट (यू.जी.सी. नई दिल्ली)
मो. 7017458783